वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वेद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये (३०/-वार्षिक) जनवरी २०१७

कुल पृष्ठ संख्या २०, वजनः 40 ग्राम
प्रकाशन तिथिः 4 जनवरी 2017

अन्तःपथ

महाश्य खुशहालचन्द 'खुरसन्द' के वलवले-अरमान *–प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'*	३ से ६
पं गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित मनुस्मृति के प्रकाशन का सुखद समाचार' *–मनमोहन कुमार*	६ से ९
स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानंद *–डॉ. विवेक आर्य*	९ से १४
भाई परमानन्द *–विशाल अग्रवाल*	१४ से १७
लघुकथा	१७ से १८

कौन निकृष्ट है?

संस्कृत के कवि ने इस विषय में बहुत सुन्दर कहा है–

केचिद् वदन्ति धनहीनजनो जघन्यः।
केचिद् वदन्ति जनहीनजनो जघन्यः॥
केचिद् वदन्ति दलहीनजनो जघन्यः।
केचिद् वदन्ति बलहीनजनो जघन्यः॥
व्यासो वदत्यखिवेदविशेषविज्ञः॥
नारायणस्मरणहीनजनो जघन्यः॥

भावार्थः–कुछ लोग कहते हैं कि जिसके पास धन नहीं है, वह व्यक्ति निकृष्ट है। कुछ कहते हैं कि जिस व्यक्ति के पास पारिवारिक जन नहीं हैं, वह निकृष्ट है। कुछ व्यक्ति कहते हैं कि जिसके साथ कोई दल नहीं है, वह निकृष्ट (घटिया) है। कुछ कहते हैं कि जिसकी भुजाओं में शक्ति नहीं है, वह घटिया है। वेदविशेष अर्थात् ईश्वर को जानने वाले महर्षि वेदव्यास ने कहा है कि जो ईश्वर को स्मरण नहीं करता वह व्यक्ति निकृष्ट (घटिया) है।

एक स्मरणीय घटना

स्वामी दयानन्द की अद्भुत मेधाशक्ति

लेखक: आचार्य श्री विश्वश्रवा: जी व्यास

(द्रष्टव्य: 'आर्य-सन्देश' साप्ताहिक के 27 अप्रैल 1986 के अंक में पृष्ठ 6 पर प्रकाशित आचार्य श्री विश्वश्रवा: व्यास का लेख। प्रस्तुति-भावेश मेरजा, 12 दिसम्बर 2016)

"हमारे नगर में हमारे मकान के पास पौराणिक पण्डित देवदत्त शर्मा रहते थे। लगभग सौ वर्ष उनकी आयु थी। हमारा बाल्यकाल था। उन्होंने हमें सुनाया कि बरेली में स्वामी दयानन्द आये। यहां के प्रसिद्ध विद्वान् अंगद शास्त्री से उनका शास्त्रार्थ तय हुआ। शास्त्रार्थ स्थल पर अंगद शास्त्री पचास प्रश्न लिखकर लाए और गर्व के साथ बोले कि–'दयानन्द आज तुम्हारा पाला अंगद शास्त्री से पड़ा है। मैं पचास प्रश्न लाया हूं, तुम जवाब नहीं दे सकोगे।' स्वामी जी ने कहा कि–'अंगद शास्त्री, सब प्रश्न सुना दो; मैं इकट्ठे जवाब दे दूंगा।' अंगद शास्त्री के हाथ में एक कागज था जिसमें पचास प्रश्न लिखे थे। पढ़कर सुना दिए। स्वामी जी हंसकर बोले–'अंगद शास्त्री, ये प्रश्न तुम्हारे हैं या किसी ने लिखवाकर लाए हो?' वह तड़पकर बोला–'मैं पण्डित हूं, ये मेरे प्रश्न हैं।' स्वामी जी ने कहा कि–'यदि ये प्रश्न तुम्हारे हैं तो कागज नीचे रख दो और बिना देखे अपने पचास प्रश्न सुनाओ।' तब अंगद शास्त्री बोला–'बिना कागज देखे मैं नहीं बोल सकता। स्वामी जी ने कहा–'तभी तो मैंने कहा कि किसी से लिखवाकर लाए हो।' स्वामी जी फिर बोले–'अंगद शास्त्री, अपना कागज अपने हाथ में उठाओ। पहले मैं तुम्हारे पचासों प्रश्न बोलता हूं, फिर उनके उत्तर दूंगा।' स्वामी जी ने पचासों प्रश्न उसी क्रम से सुना दिए जिस क्रम से लिखे थे और अंगद शास्त्री ने बोले थे। अंगद शास्त्री चकित होकर बोला–'स्वामी दयानन्द, आप मनुष्य नहीं, कोई देवता (दिव्य गुण व सामर्थ्य युक्त मनुष्य) हो, मैं आपसे शास्त्रार्थ नहीं कर सकता।' देवदत्त शर्मा ने सुनाया कि–'मैं उस शास्त्रार्थ में स्वयं उपस्थित था।"

वेदप्रकाश

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६६ अंक ६ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, जनवरी, २०१७

सम्पा० **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व० **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

ओ३म्

अलभ्य दस्तावेज़ों से:–

महाशय ख़ुशहालचन्द 'ख़ुरसन्द' के वलवले-अरमान

–राजेन्द्र 'जिज्ञासु' वेदन सदन,

अबोहर–१५२११६

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज की जीवनी **'आनन्द रस धारा'** यह सेवक श्रीयुत अजय जी द्वारा आर्य जाति को भेंट कर चुका है। उस समय किन्हीं कारणों से इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या को नहीं बढ़ाया जा सकता था। दस्तावेज़ों की व सामग्री की तो हमारे पास कमी न थी और न है। इस पुस्तक के छपते ही 'वेदप्रकाश' में अपने एक लेख में इस विनीत ने यह लिखा था कि 'आनन्द रस धारा' के इस संस्करण की खपत हो जाने पर आर्य जनता चाहेगी तो अजय जी के संकेत पर महाशय खुशहालचन्द जी के आरम्भिक कुछ ऐतिहासिक महत्त्व के लेखों तथा नई-नई जानकारी देने वाली और सामग्री जोड़कर इस जीवन चरित्र को तीन सौ पृष्ठों का कर दिया जायेगा।

इस बीच में डी०ए०वी० स्कूलों के कई उत्साही अध्यापक-अध्यापिकायें महात्माजी पर कुछ न कुछ लिखते रहते हैं। कई प्रेमी इस सेवक पर भी एक लेखमाला देने का दबाव बनाते रहे। 'आर्यजगत्' में छपने वाली सामग्री की भी महात्मा जी के भक्त हमारे मित्र प्रेमी चर्चा करते रहे। मन में आया कि पुस्तक कर नया संस्करण तो जब छपेगा सो देखा जायेगा। प्रेमियों की जिज्ञासा को शान्त करने के लिये वेद प्रकाश व परोपकारी में कुछ ठोस लेख देने ही चाहिये।

भ्रम भञ्जन:–हमारे सामाजिक पत्रों में अधिकांश लिखने वाले मूल स्रोतों से दूर-दूर रहकर सुनी सुनाई गोलमोल बातें लिखने के अभ्यासी हैं। कुछ मित्रों ने

यह बताया कि महात्माजी के दैनिक मिलाप के मुखपृष्ठ पर एक पद्य छपा करता था। उनसे निवेदन किया कि यह आंशिक सत्य है। 'मिलाप' के मुख पृष्ठ पर क्या-क्या छपता रहा? इसकी किसी ने कब खोज की? किस ने मिलाप के आरम्भिक युग का कोई अंक देखा है? सम्भव है श्री पूनम सूरी जी के पास कोई दो चार अंक हों।

भ्रम भञ्जन के लिये तथा इतिहास की सुरक्षा के लिये आज हम मूल स्रोत–अलभ्य दस्तावेज़ सामने रखकर यह बताना चाहते हैं कि 'मिलाप' दैनिक साप्ताहिक पत्रों के आकार का ही छपता था। मुखपृष्ठ पर हिन्दी भी **'दैनिक मिलाप'** छपता था। मुखपृष्ठ के ऊपर बीचों-बीच 'ओ३म्' ध्वज छपा करता था। 'ओ३म्' देवनागरी में ही होता था। ओ३म् ध्वज के साथ एक पद्य होता था। एक पंक्ति दाई ओर एक ध्वज के बाईं ओर होती थी। सात जून सन् 1924 के अंक पर निम्न पद्य छपा मिलता है:–

हर एक शकस्तादिल की हिम्मत बढ़ाने वाला।
हुब्बे वतन के दिलकश नग़में सुनाने वाला॥

हम अनुमान प्रमाण से ही कह सकते हैं कि ये पंक्तियाँ श्रीमान् महाशय 'खुशहालचन्दजी रचित किसी कविता की हो सकती हैं।

पृष्ठ दो पर एक पूरे कालम में वेदामृत छपा करता था। 'नाथ' जलालपुरी द्वारा आशीर्वाद शीर्षक से अथर्ववेद के एक मन्त्र की भावपूर्ण व्याख्या हमारे सामने है। श्री नाथ जलालपुर जहाँ के ही अच्छे स्वाध्यायशील लोकप्रिय आर्य लेखक थे।

उन दिनों महात्मा गांधी मुस्लिम तुष्टिकरण के लिये हिन्दुओं के विशेष रूप से आर्य समाजीयों के दिल दुखाने के लिये जो जी में आता था लिखते व बोलते रहते थे। खुशहालचन्द जी ने **'महात्मा गांधी को क्या हो गया'** शीर्षक से मिलाप में एक लेख माला आरम्भ की थी। लेख की एक-एक पंक्ति से आपके जोश, देश प्रेम व जाति सेवा के अरमानों का पता चलता है। देश व हिन्दू जाति के हितों की रक्षा के लिये इस लेख माला में महाशय खुशहालचन्द ने अत्यन्त निडरता से अपनी लेखनी चलाई।

आपने इस लेखमाला में हिन्दू-मुस्लिम एकता का तो समर्थन किया परन्तु, तुष्टिकरण के लिये हिन्दुओं के 'आत्म समर्पण' का घोर विरोध किया। गांधी जी हिन्दुओं को लुटता-पिटता देखकर भी हिन्दुओं को आत्म समर्पण का ही उपदेश देते रहते थे। मालबार में हिन्दुओं के नरसंहार पर गांधी जी के मौन रहने और आँखे

मीचने पर खुशहालचन्द जी ने अपने सम्पादकीय में ये मार्मिक पंक्तियाँ लिखी थीं। इन्हें पढ़कर आज भी जाति प्रेमी जनता का हृदय रक्तरोदन करता है। "जब मालाबार में रक्त पिपासु मोपले हिन्दुओं पर अत्याचार करें, उनको लूटें, उनको विनष्ट करें। उनको बलात मुसलमान बनायें तो हम कह दें कि यह घटनायें घटी ही नहीं। यह अतिशयोक्तिपूर्ण कथन है। वहाँ कोई हिन्दू नहीं लुटा। अढ़ाई सहस्र तो क्या वहाँ एक भी हिन्दू मुसलमान नहीं बनाया गया। डेढ़ सहस्र की बात तो एक ओर रही वहाँ किसी मोपले ने किसी हिन्दू का बाल तक बीका नहीं किया। अत्यन्त कृपापूर्वक, दया से, अत्यन्त उदारता से विद्रोह के दिनों में मोपलों ने हिन्दुओं की रक्षा की।"

इसी सम्पादकीय वाले पृष्ठ पर खुशहालचन्द जी ने वायक्कुम के प्रसिद्ध सत्याग्रह पर भी एक ज़ोरदार टिप्पणी की है। ट्रावनकोर के दीवान ने देशवासियों को मूर्ख बनाने के लिये एक वक्तव्य में कहा था कि चार सहस्र छः सौ मील लम्बी सड़क पर अस्पृश्य जातियों को मात्र दस मील के टुकड़े पर चलने का निषेध है। और भी कुछ बातें कही गईं। उस समय स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज के नेतृत्व में भेदभाव के विरुद्ध प्रचण्ड सत्याग्रह चल रहा था।

खुशहालचन्द जी ने दीवान के वक्तव्य पर लिखाा था "इन चार सहस्र मील के मार्ग पर किसी को कोई आपत्ति ही नहीं, आपति यदि है तो इस दस मील लम्बी सड़क पर है। किसी वर्ग के लिये मन्दिर के द्वार बन्द क्यों हों?"

गांधीजी ने स्वराज्य पार्टी के नेताओं को कांग्रेस से निकल जाने को कहा। गांधीजी के फ़र्मान का समाचार देकर पं० मोतीलाल का करारा वक्तव्य भी उसी अंक में आपने प्रकाशित कर दिया। उसका शीर्षक ही बड़ा मार्मिक थाः–

"महात्मा गांधी को कांग्रेस का मुफ़्ती बनने का कोई अधिकार नहीं है।"

सच्च भी यही है कि कांग्रेस में बहुमत को कभी महत्त्व दिया ही नहीं दिया। जो गांधी जी ने कह दिया सो ठीक। बहुमत लोकतन्त्र जाय भाड़ में। देश सरदार पटेल को प्रधान मन्त्री बनाना चाहता था परन्तु गांधीजी ने देश के लोकमत को रौंद दिया।

उन्हीं दिनों गांधीजी ने आर्यसमाज पर, वेद पर, सत्यार्थप्रकाश पर, ऋषि दयानन्द पर, स्वामी श्रद्धानन्द पर, शुद्धि पर, मूर्तिपूजा विषयक वैदिक मान्यताओं पर एक घिनौना लेख दे दिया। मिलाप ने निर्भय होकर दूसरों के तुष्टिकरण के लिये गांधीजी के इस लेख की धज्जियाँ उड़ा कर रख दीं। मिलाप में सम्पूर्ण आर्यजगत द्वारा गांधी जी के लेख के निन्दा के प्रस्ताव छपते रहते थे।

मिलाप के इसी अंक में लाहौर के डी०ए०वी० कॉलेज के छात्रावास में इसी सम्बन्ध में प्रिं० साईदास जी की अध्यक्षता में हुई सभा के विस्तृत समाचार दिये हैं। इस सभा में महात्मा हंसराज जी, प्रो० देवीदयाल, मेहता रामचन्द्र जी शास्त्री आदि कई प्रमुख विद्वान् महानुभाव थे। इस विस्तृत समाचार का शीर्षक है:–

'महात्मा गांधीजी का वेदों पर कुल्हाड़ा'

मेहता रामचन्द्रजी ने घोषणा की, "हम अपने धर्म की आन पर सब कुछ बलिदान करने को तैय्यार हैं।"

समर्पण भाव से खुशहालचन्द जी ने मिलाप को जन्म दिया था। इसके आरम्भिक युग के अंक उनके मनोभावों का दर्पण है। यह एक नमूना है। शेष फिर कभी।

ओ३म्

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित मनुस्मृति के प्रकाशन का सुखद समाचार'

–मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज की पहचान सत्य व प्रामाणिक धार्मिक व इतर ग्रन्थों के अध्ययनशील लोगों के रूप में होती है। संसार में आज जितने भी मत व पन्थ प्रचलित हैं, शायद किसी के पास इतना साहित्य नहीं है जितना कि वैदिक सनातन धर्मी आर्यसमाज के पास। दूसरे मतों के अनुयायी अपने एक व कुछ प्रमुख ग्रन्थों के अध्ययन व उसके पाठ को ही धर्म मानते हैं और उन्हीं तक सीमित रहते हैं जबकि आर्यसमाज में जो कुछ पढ़ा जाता है उसकी सत्यासत्य की परीक्षा कर उसे सत्य होने पर ही स्वीकार करते हैं। यदि ऐसा न होता तो महर्षि दयानन्द ने सत्यमत के प्रचार-प्रसार को अपने जीवन का लक्ष्य न बनाया होता। वह भी औरों की तरह कुछ ग्रन्थों को पढ़कर उनका पाठ, चिन्तन-मनन करने व योगाभ्यास आदि में ही अपना जीवन बिता सकते थे। आज ईश्वरीय ज्ञान वेद जो सृष्टि के आदि ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठित हैं, प्रायः सभी आर्य समाजों व इसके प्रमुख अनुयायियों के घरों में विद्यमान हैं। न केवल ग्रन्थ अपितु अनेक आर्य विद्वानों द्वारा वेदों पर हिन्दी व अंग्रेजी में की गई टीकायें भी आर्यों के पास मिल जायेंगी। सत्यार्थप्रकाश और ऋषि दयानन्द के अन्य ग्रन्थ भी सभी आर्यसमाजी परिवारों व इसके शुभचिन्तकों के घरों में उपलब्ध रहते हैं। हम

जन्मजात आर्यसमाजी नहीं थे। 18 वर्ष की आयु में अपने एक सहपाठी मित्र के द्वारा आर्यसमाज के सम्पर्क में आये और हमें आर्यसमाज की विचारधारा, मान्यतायें व सिद्धान्त इतने प्रिय व सत्य अनुभव हुए कि हमें पता ही नहीं चला कि कब हम वेदों व आर्यसमाज सहित ऋषि दयानन्द के अनुयायी बन गये।

आज हम आर्यसमाज के प्रमुख विद्वान् **पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय** जी द्वारा रचित **मनुस्मृति** की चर्चा कर रहे हैं। आज समाज के अनेक लोगों द्वारा मनुस्मृति का विरोध किया जाता है। मनुस्मृति का विरोध करने वाले लोगों ने न तो मनुस्मृति का अध्ययन किया होता है और न यही जानने की कोशिश की होती है कि सृष्टि के प्रथम व द्वितीय पीढ़ी के व्यक्ति जो वेदों के परम विद्वान व देश के प्रथम राजा व राजर्षि हुए, उनकी अपनी निजी वेदसम्मत मान्यतायें क्या थीं और अरबों व करोड़ों वर्ष पुरानी मनुस्मृति में महाभारतकाल के बाद स्वार्थी व अज्ञानी मनुष्यों ने किस मात्रा में प्रक्षेप कर उसके यथार्थस्वरूप को बिगाड़ा है। ऋषि दयानन्द जी के भक्त पंडित राजवीर शास्त्री जी ने आर्य विद्वान् डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी के साथ मिल कर अनुसंधान किया तो पाया कि वर्तमान समय में प्रचलित मनुस्मृति में 56 प्रतिशत श्लोक प्रक्षिप्त हैं। जिन लोगों ने यह श्लोक बनाकर प्रक्षिप्त किये थे, वे लोग वेदों के विपरीत अनेक मान्यताओं के पोषक थे जिसका आधार उनका अज्ञान व स्वार्थ था। पं. राजवीर शास्त्री जी के अनुसंधान का परिणाम यह है कि 2685 श्लोकों वाली मनुस्मृति में 1502 श्लोक प्रक्षिप्त हैं और मात्र 1183 श्लोक मनु महाराज के हैं जो वेदों के सिद्धान्तों के अनुरूप हैं। मनुस्मृति के इन शुद्ध श्लोकों से हमारे ब्राह्मण व क्षत्रिय आदि वर्णों के लिए तो कठिनाई हो सकती है परन्तु शूद्र वर्णों के लोगों के लिए वह हितकर व लाभप्रद ही है। यह भी बता दें कि मनु के अनुसार वर्णव्यवस्था का अधार मनुष्य की जन्मना जाति न होकर उनके गुण, कर्म व स्वभाव हैं। वेदों को पढ़ने का अवसर मिलने पर भी जो वेद पढ़ नहीं पाता या नहीं पढ़ता और जो अल्प ज्ञान वाला होता है, वैदिक काल में उसी की संज्ञा शूद्र होती थी। ऐसे अनेक उदाहरण आज भी विद्यमान है कि जब एक वर्ण के व्यक्ति व उसकी सन्तानों की उससे उत्तम वर्णों में उन्नति हुई हो। अतः मनुस्मृति व मनु जी का विरोध करने वालों को मनुस्मृति का गम्भीर अध्ययन कर यथार्थ स्थिति जानकर ही उनकी स्तुति व निन्दा में प्रवृत्त होना चाहिये। ऐसा न कर बिना अध्ययन किये आलोचना करना घोर पापरूप कर्म है जो ईश्वर के द्वारा दण्डनीय है।

आर्यजगत में आर्य साहित्य प्रकाशित करने वालों में सबसे प्रसिद्ध नाम

'विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली' का है जो विगत 92 वर्षों से आर्यसमाज के सभी प्रकार के साहित्य का प्रकाशन कर रहे हैं। सम्प्रति श्री अजय आर्य इसके संचालक व स्वामी हैं। आप प्रत्येक वर्ष अनेक नये व अप्राप्य ग्रन्थों का प्रकाशन करते हैं। विगत माह अजमेर के ऋषि मेले की यात्रा में पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित मनुस्मृति के प्रकाशन पर आपसे चर्चा हुई थी। कल उनके द्वारा प्रकाशित मासिक पत्र **'वेद प्रकाश'** का दिसम्बर, 2016 हमें अंक प्राप्त हुआ जिसमें आपने मुख पृष्ठ पर पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित मनुस्मृति की भूमिका और हिन्दी अनुवाद सहित शुद्ध, परिष्कृत संस्करण के प्रकाशन की सूचना दी है। इस ग्रनथ में 664 पृष्ठ होंगे और इसका मूल्य मात्र 300 रुपये रक्खा गया है। हमें आर्यसमाज के साहित्य जगत की महत्त्वपूर्ण गतिविधियों का यह समाचार वर्तमान समय का प्रमुख समाचार प्रतीत होता है। पाठकों के लिए इस मनुस्मृति की एक झलक भी प्रस्तुत करते हैं। मनुस्मृति का 5/32 श्लोक **'सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम्। योऽर्थे शुचिर्हि स शुचिर्न मृद्वारिशुचि शुचिः॥'** है। "मन की शुद्धि ही सबसे बड़ी शुद्धि" शीर्षक देकर अनुवादक व सम्पादक ने इसका अर्थ करते हुए लिखा है कि **'(सर्वेषामेव शौचानानाम्)** सब शोचों (स्वच्छताओं) में **(अर्थ शौचं परं स्मृतम्)** धन की शुद्धि सबसे बढ़कर है। **(य अर्थे शुचि)** जो धन कमाने में शुद्ध है **(स शुचिः)** वह वस्तुतः शुद्ध है **(न मृत्+वारि+शुचिः शुचिः)** मिट्टी और जल की शुद्धि शुद्धि नहीं। अर्थात् जिसके धन कमाने के साधन शुद्ध नहीं हैं वह कितना ही अन्य बातों में शुद्ध क्यों न हो शुद्ध नहीं कहा जा सकता।' यह बात मनु जी ने आज से करोड़ो वा लगभग दो अरब वर्ष पहले कही थी। देश की जनता वर्तमान में अर्थ की अशुचिता से त्रस्त है। अमीरी व गरीबी का भेद इतना बढ़ गया है कि रात दिन काम करके भी करोड़ों लोग अपना दो समय पेट नहीं भर पा रहे हैं। ऐसे लोगों की शिक्षा व चिकित्सा आदि की बात करना ही अप्रासंगिक है। अर्थ शुचिता के प्रायः समाप्त हो जाने और देश व साधारण जनता पर इसके दुष्प्रभाव के कारण केन्द्र सरकार को बड़े नोटों का प्रचलन बन्द करना पड़ा। आश्चर्य है कि हमारे देश में जनता के नेता कहलाने वाले विपक्षी दलों के लोग इस जनकल्याण के कार्य का विरोध कर रहे हैं। यदि वह सहयोग करते तो देश काले धन की अर्थव्यवस्था से बाहर निकल सकता था। हमें लगता है कि जब तक देश में अर्थ शुचिता नहीं होगी देश के नागरिक सभ्य व संस्कारवान् नहीं कहे जा सकते। वेद का कार्य मनुष्यों को शुचिता का जीवन व्यतीत करते हुए संस्कारों से पुष्ट करना ही है।

आर्य विद्वान् डॉ. ज्वलन्तकुमार शास्त्री ने पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी का मनुस्मृति का एक शुद्ध परिष्कृत (प्रक्षिप्तांश रहित) संस्करण विस्तृत भूमिका और हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित किया था। सम्भवत: इसके दो ही संस्करण प्रकाशित हुए थे–1936 तथा 1939 ई. में। चिरकाल से यह ग्रन्थ अनुपलब्ध है।' यह बता दें कि मनुस्मृति में ग्यारह अध्याय हैं। पहला अध्याय सृष्टि की उत्पत्ति तथा धर्मोत्पत्ति पर है। दूसरे अध्याय में संस्कार एवं ब्रह्मचर्याश्रम का वर्णन है। तृतीय अध्याय में समावर्तन, विवाह, पंचयज्ञ के विधानों की चर्चा है। चतुर्थ अध्याय में गृहस्थान्तर्गत आजीविकायें और व्रतों का विधान किया गया है। मनुस्मृति के पांचवें अध्याय में भक्ष्याभक्ष्य, प्रेतशुद्धि, द्रव्य शुद्धि तथा स्त्री धर्म विषयक विचार व विधान हैं। छठे अध्याय में वानप्रस्थ और संन्यास धर्म का विषय वर्णित है। सातवां अध्याय राजधर्म विषय पर है। आठवां अध्याय राजधर्मान्तर्गत व्यवहारों (मुकदमों) के निर्णय पर प्रकाश डालता है। नवम अध्याय में राजधर्मान्तर्गत व्यवहारों के निर्णय को रखा गया है। दसवां अध्याय चातुर्वण्य धर्मान्तर्गत वैश्य, शूद्र के धर्म तथा चातुर्वण्य धर्म का उपसंहार है। अन्तिम ग्यारहवें अध्याय में प्रायश्चित विषय का वर्णन है। इन सभी विषयों को मनुस्मृति में पढ़कर आप भगवान् मनु के प्रशंसक बन जायेंगे। जो विरोध करते हैं वह भी यदि पढ़ेंगे तो वह भी आलोचना नहीं कर सकेंगे क्योंकि मनु तो समाज को सुव्यवस्थित रूप देने वाले ऋषि थे। उन्होंने किसी मनुष्य के हितों के विरुद्ध कोई शब्द नहीं लिखा। समाज के सभी मनुष्य उन्हें प्रिय व मित्रवत् थे। लेख को विराम देने से पूर्व हम निवेदन करते हैं कि इस ग्रन्थ के प्रकाशित होने की प्रतीक्षा करें और प्रकाशित होने पर इसे अवश्य मंगायें स्वयं पढ़े व अन्यों को भी पढ़ने की प्रेरणा दें। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानंद: तुलनात्मक अध्ययन

–डॉ विवेक आर्य

मैंने स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानंद को लेकर एक शंका प्रस्तुत की थी। अनेक मित्रों ने अपने-अपने विचार प्रकट किये। सभी का धन्यवाद। मैंने यह प्रश्न क्यों किया? इस पर चर्चा करनी आवश्यक है। दोनों महापुरुषों के विचारों में भारी भेद है। इसलिए इस विषय पर चिंतन की आवश्यकता है। मनुष्य

जीवन का उद्देश्य सत्य को ग्रहण करना एवं असत्य का त्याग करना है। इसलिए हम भी उसी का अनुसरण करें। यही इस लेख का भी उद्देश्य है।

1. स्वामी दयानंद वेदों को ईश्वरीय वाणी होने के कारण सत्य मानते हैं। स्वामी दयानंद ने यह मान्यता वर्षों के अनुसन्धान, चिंतन, मनन एवं निधिध्यासन के पश्चात स्थापित की थी। एक अनुमान से स्वामी दयानंद ने 5000 धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन उस काल में किया था जिसमें से 3000 पुस्तकें उन्हें उपलब्ध थीं। स्वामी विवेकानंद का वेदों में प्रवेश नहीं था। वे अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस द्वारा मान्य मूर्तिपूजा पद्धति एवं काली पूजा और वेदांत के उपासक थे। इसलिए स्वामी विवेकानंद की विचारधारा केवल पुराणों और वेदांत तक सीमित थी।
2. स्वामी दयानंद ने पुराणों को मनुष्यकृत सिद्ध किया। स्वामी जी ने बताया कि पुराण अनेक काल में विभिन्न मनुष्यों द्वारा रचे गए। पुराणों के रचनाकारों ने अपना नाम न देकर व्यास कृत दिखाकर एक अन्य प्रपंच किया था। पुराणों में वेद विरुद्ध मान्यताएं, परस्पर विरोध, देवी-देवताओं के विषय में अपमानजनक बातें जैसे उन्हें कामुकी, चरित्रहीन बताना, अज्ञानी बताना, परस्पर शत्रुता भाव आदि देखकर उन्हें कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति धार्मिक ग्रन्थ नहीं मान सकता। स्वामी विवेकानंद ने इतना गंभीर चिंतन पुराणों में धर्म-अधर्म विषय को लेकर नहीं किया था।
3. स्वामी दयानंद ने अपने अनुसन्धान से यह सिद्ध किया कि वेदों में गोमांस भक्षण और यज्ञ में पशु बलि आदि का उल्लेख नहीं है। मध्य काल में सायण-महीधर आदि ने वेदों के गलत अर्थ कर यह प्रपंच फैलाया। स्वामी विवेकानंद वेदों में गोमांस भक्षण और पशुबलि आदि स्वीकार करते हैं। वे यहाँ तक लिखते हैं कि प्राचीन काल में भारत देश इसलिए महान था क्योंकि यज्ञों में पशुबलि दी जाती थी और ब्राह्मण गोमांस भक्षण करते थे। संभवत उनकी बंगाली पृष्ठभूमि उन्हें इस मान्यता को स्थापित करने में सहायता करती थी। गोरक्षा के मुद्दे पर आपको RSS कभी स्वामी विवेकानंद का नाम लेते नहीं दिखेगा। स्वामी दयानंद का वेद और गोमांस के सम्बन्ध में चिंतन सभी को स्वीकारीय है।
4. स्वामी दयानंद ने अपने भागीरथ अनुसन्धान से यह सिद्ध किया की वेदों के जो भाष्य पश्चिमी लेखक जैसे मैक्समूलर आदि कर रहे हैं, वे भ्रामक हैं। उनसे वेदों की प्रतिष्ठा की हानि होगी। स्वामी दयानंद मैक्समूलर महोदय को

साधारण विद्वान् की श्रेणी का भी नहीं मानते।

उन्होंने विदेशी लेखकों के विषय में एक लोकोक्ति के माध्यम से उनके ज्ञान के स्तर का समुचित आंकलन किया था। स्वामी दयानन्द लिखते हैं। जिस देश में कुछ भी पैदावार नहीं होती वहां पर अरंडी को भी वृक्ष समान समझा जाता है। वैसा ही स्तर विदेशी लेखकों का वेद सम्बन्ध में ज्ञान को लेकर है। विदेशों में संस्कृत एवं वेद विद्या के ज्ञान से कोई परिचित नहीं है। इसलिए मैक्समूलर आदि लेखक भी बड़े विद्वान् गिने जाते हैं। स्वामी विवेकानंद वेदों के भाष्यों के विषय में अनुसन्धान से परिचित नहीं थे। अन्यथा वे मैक्समूलर महोदय का आधुनिक सायण की उपाधि देकर महिमामंडन नहीं करते।

5. स्वामी दयानंद ने पाया कि हिन्दू समाज के पतन का मुख्य कारण मूर्ति पूजा और उससे सम्बन्धित अन्धविश्वास है। उन्होंने मूर्तिपूजा को वेद विरुद्ध भी सिद्ध किया। स्वामी दयानंद ने ईश्वर के निराकार स्वरूप की स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना करने का प्रावधान किया। यह मान्यता प्राचीन ऋषि परंपरा के अनुसार थी न कि कल्पित थी। स्वामी विवेकानंद जीवन भर मूर्तिपूजा का समर्थन करते रहे। उनकी अलवर नरेश के संग वार्तालाप को अधिकाधिक प्रचारित भी इसी उद्देश्य से किया जाता है। उनके गुरु रामकृष्ण परमंहस भी मूर्तिपूजक थे। विडम्बना देखिये स्वामी दयानंद जिस अज्ञान रूपी खाई से हिन्दू समाज को निकालना चाहते थे हिन्दू समाज उसी खाई में और अधिक गहरे धसता चला गया। पहले राम और कृष्ण जी की मूर्तियां पूजी जाती थीं। फिर कल्पित देव-देवियों जैसे काली, संतोषी माँ आदि को महत्व मिला। कालांतर में गुरुओं और मठाधीशों की मूर्तियों का त्याग कर साईं बाबा उर्फ़ चाँद मियां एक मस्जिद में रहने वाले मुस्लिम फकीर को चमत्कार की आशा से पूजना आरम्भ कर दिया। इससे भी मन नहीं भरा तो अजमेर के मुस्लिम ख्वाजा गरीब नवाज से लेकर भारत वर्ष में स्थित सैकड़ों इस्लामिक कब्रों पर जाकर अपना सर पटकने लगे। क्यों? केवल चमत्कार की आशा से। कर्म करने का जो सन्देश श्री कृष्ण ने गीता में दिया था उसकी धज्जियाँ स्वयं हिंदुओं ने उड़ा दीं। मूर्तियों को भगवान मानकर पूजने से यही हानि होती है। स्वामी दयानंद अपनी दूरदृष्टि एवं अनुभव से यह समझ गए एवं हमें समझा गए थे। जबकि स्वामी विवेकानंद उस रोग का समाधान करने के स्थान पर उसी को बढ़ावा देते दिख रहे हैं। RSS द्वारा कुछ दिन पहले मुस्लिम फकीर

साईं बाबा की पूजा को हिन्दू दर्शन कहकर स्वीकारीय बताने को आप क्या कहेंगे? कल को हिन्दू समाज में कोई अफजल गुरु और अजमल कसाब का मकबरा बना देगा और हिन्दू उसे पूजने लगेगा। तो क्या RSS उसे भी हिन्दू दर्शन कहकर पूजने की मान्यता देगा? स्वयं चिंतन करें।

6. स्वामी विवेकानंद मांसाहारी थे, धूम्रपान के व्यसनी थे। 32 वर्ष की आयु में अस्थमा एवं मधुमेह से उनकी असमय मृत्यु हो गई। मांसाहार के इतने शौक़ीन थे कि जब अमरीका गए तब केवल मांस खाया। कुछ भक्तों ने पूछा कि आपके मांसाहारी होने से आपके देशवासी नाराज होंगे। स्वामी विवेकानंद बोले कि जो नाराज होते हों तो मेरे लिए यहाँ पर शाकाहारी भोजन की व्यवस्था कर दें। स्वामी दयानंद ब्रह्मचर्य और प्राणायाम के बल पर बलिष्ठ शरीर के स्वामी, शाकाहारी होने के साथ-साथ निरामिष भोजी भी थे। योग विद्या के बल पर शारीरिक, आध्यात्मिक उन्नति कर अपने मिलने वालों के समक्ष मनोहर छवि प्रस्तुत करते थे। जिससे उनका सत्संग करने वाले भी अपना जीवन उन्नत करने का प्रयास करें। कोई व्यक्ति अपने नाम के समक्ष स्वामी शब्द लगाता है तो वह किसका स्वामी होता है? धन, सम्पदा और पद का स्वामी तो वह होता नहीं अपितु अपनी इन्द्रियों और मन का स्वामी होता है। स्वामी विवेकानंद की रूचि मांसभक्षण और धूम्रपान में देखकर उन्हें अपनी इन्द्रियों का स्वामी किसी भी आधार पर नहीं कहा जा सकता। एक मांसाहारी, धूम्रपान व्यसनी संन्यासी को मैं अपना आदर्श किसी भी आधार से नहीं मान सकता।
7. स्वामी विवेकानंद के विचारों में मुझे कहीं भी एकरूपता नहीं दिखती। एक ओर वे भारतीय दर्शन के ध्वजावाहक हैं वही दूसरी और विदेशियों की भरपूर की प्रशंसा करते दीखते हैं। कभी वे ईसाईयों की आलोचना करते हैं, तो कभी ईसा मसीह के गुणगान करते दीखते हैं। कभी इस्लाम की आलोचना करते हैं, तो कभी मुहम्मद साहिब के गुणगान करते दीखते हैं। कभी अंग्रेजों के भारतीयों को गुलाम बनाने पर निंदा करते हैं, तो कभी अंग्रेजों की प्रशंसा करते दीखते हैं। उनके विचारों में एकरूपता, सिद्धांत की स्थापना जैसा कुछ नहीं दीखता। उनके इसी चिंतन का असर रामकृष्ण परमहंस मिशन पर भी वर्तमान में स्पष्ट दीखता है। 1990 में इस मिशन ने हम हिन्दू नहीं है के नाम से कोर्ट में याचिका दायर कर अपने आपको हिंदुओं से अलग दिखाने का प्रयास किया था। वर्तमान में ईसा मसीह की वाणी और मुहम्मद साहिब के विचार

जैसी पुस्तकें इस मिशन द्वारा प्रकाशित होती हैं। सेक्युलर लबादे में अपने आपको लपेट कर दुकानदारी अच्छे से चलती है। स्वामी दयानंद के समान कड़वे सत्य को बोलने से आलोचना का शिकार होना पड़ता है। मगर योगी लोग मान-प्रतिष्ठा से अधिक सत्य का मंडन और असत्य का खंडन करते हैं। यही कारण है कि सत्य के उपदेशक स्वामी दयानंद को हिन्दू समाज उतना मान नहीं देता, जितना मान मीठी-मीठी बात करने वाले स्वामी विवेकानंद को देता है।

8. स्वामी विवेकानंद के शिकागो भाषण का बड़ा महिमामंडन किया जाता है। कुछ लोग इस भाषण को दुनिया में परिवर्तन करने वाला भाषण करार देते हैं। मैंने 1893 में विश्व धर्म सम्मेलन में दिए गए अन्य वक्ताओं के भाषणों को पढ़ा। स्वामी विवेकानंद की उपस्थिति में उसी मंच से अनेक ईसाई वक्ताओं ने वेदों में गोमांस भक्षण और यज्ञों में पशुबलि जैसे विषयों पर वेदों की प्रतिष्ठा को धूमिल करने वाले अनेक भाषणों को पढ़ा था। स्वामी विवेकानंद ने उनका किसी भी प्रकार से प्रतिकार नहीं किया। पाठक इस विषय में स्वयं निणय करें। क्यों? स्वामी विवेकानंद आलोचना का शिकार नहीं बनना चाहते थे। जहाँ तक कुछ ईसाईयों को वेदान्त में दीक्षित करने का प्रश्न है। साउथ अफ्रीका में प्रवासी हिंदुओं को तेजी से ईसाई बनते देख उन्हें शुद्ध करने वाले भवानीदयाल संन्यासी ने लिखा कि जिस काल में स्वामी विवेकानंद चंद ईसाईयों को वेदांती बनाने में लगे हुए थे। उसी काल में हज़ारों की संख्या में अफ्रीका और लैटिन अमरीका में हिंदुओं को ईसाई बनाया गया। मेडागास्कर उपद्वीप में तो एक भी प्रवासी भारतीय हिन्दू नहीं बचा था। स्वामी विवेकानंद ने ईसाई मिशनरी का कोई प्रतिकार नहीं किया। वहीं पाठक स्वामी दयानंद द्वारा 1869 में हुए सैकड़ों पंडितों की उपस्थिति में किये गए काशी शास्त्रार्थ को इतिहास की सबसे बड़ी घटना क्यों नहीं मानते? जब स्वामी दयानंद ने शताब्दियों से प्रचलित धार्मिक अन्धविश्वास को मूल से नष्ट करने का संकल्प लिया था। स्वामी दयानंद पद, धन, प्रतिष्ठा आदि किसी भी प्रकार के प्रलोभन में नहीं आये। उन्हें प्राण हानि तक का खतरा था। काशी नरेश से लेकर सभी पंडित अपनी रोजी-रोटी के चलते उनके विरुद्ध थे। मगर सत्य के उपासक दयानंद ने को केवल ईश्वर पर विश्वास और वेदों के ज्ञान पर भरोसा था। इस घटना का महिमामंडन शिकागो भाषण के समान किया जाता तो आज हिंदुओं की संतान मुस्लिम पीरों और कब्रों पर सर न पटक रही होती। क्योंकि

वेदों के सत्य ज्ञान का प्रकाश होता जिससे समाज का हित होता।

इतने भारी सिद्धांतिक भेद होने के कारण भी स्वामी दयानंद के स्थान पर स्वामी विवेकानंद का महिमामंडन करना हिन्दू समाज को शोभा नहीं देता। दयानंद केवल और केवल सत्य के उपासक हैं। जबकि विवेकानंद सुनियोजित छवि निर्माण (Planned Marketing) के उत्पाद हैं। आज हिन्दू समाज स्वामी दयानंद के विचारों से स्वाध्यायशील न होने के कारण परिचित ही नहीं है। उन्हें कोई भी स्वामी दयानंद के विरुद्ध यह कहकर भ्रमित कर देता है कि स्वामी दयानंद मूर्तिपूजा और पुराणों का विरोध करते थे। इसलिए उनकी मत सुनिये। वे आंख बंदकर तत्काल उन पर विश्वास कर लेते हैं। इसी प्रकार से कोई स्वामी विवेकानंद को सबसे बढ़िया कहकर उनका महिमामंडन कर देता है। वे आंख बंदकर तत्काल उन पर भी विश्वास कर लेते हैं। यह पुराना रोग है।

हिन्दू समाज की सामाजिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक व्याधि का उपचार केवल और केवल स्वामी दयानंद की कड़वी दवाई है। जिसे लेने से वह सदा हिचकता रहता है।

मैंने अपनी क्षमता से अपने विचार प्रकट किये हैं। पाठक अपनी योग्यतानुसार निर्णय करें कि स्वामी दयानंद को उनका वास्तविक स्थान और मान हिन्दू समाज क्यों न दे?

भाई परमानंद

–विशाल अग्रवाल

भारतभूमि पर अनेक महापुरुष हुए हैं जन्म भूमि के ऐसे सपूत जिन्होंने जो कुछ किया देश के लिए ही किया–,सम्पूर्ण जीवन ही देश के लिए बिताया। उन्होंने देश की स्वाधीनता के लिए विदेशी आक्रान्ताओं से आजीवन संघर्ष किया, अपने सुख तथा पत्नी बच्चों के मोह को परे रख कर अनेक कष्टों को सहते हुए देश हित में पूरा जीवन होम किया। माँ भारती के उन्हीं सपूतों में से एक थे भाई परमानंद जिनका 8 दिसंबर को निर्वाण दिवस था।

दशम गुरु, गुरु तेग बहादुर के साथ ही बलिदान देने वाले भाई मतिदास, जिन्हें मुस्लिम ना बनने पर औरंगजेब के आदेश से आरे से बीच से चीर दिया गया था और जिनके बलिदान से भाव विह्वल हो गुरु ने उन्हें भाई की उपाधि से विभूषित किया था, के वंश में जन्मे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी भाई परमानंद एक स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही महान इतिहासकार, समाज सुधारक, आर्य

समाज और वैदिक धर्म के सच्चे प्रचारक, करतार सिंह सराबा, भगत सिंह, सुखदेव, बिस्मिल आदि अनेक क्रांतिकारियों के प्रेरणास्रोत, विचारक और दृष्टा भी थे।

उनके विचारों से प्रभावित होकर लाला हरदयाल सहित हजारों भारतीय अमेरिका और कनाडा से ग़दर हेतु भारत पहुंचे थे। उनके तर्क अकाट्य होते थे, जो व्यक्ति के हृदय की तह में जाकर उसके विचारों को बदल देते थे। हिंदी में भारत का गौरवशाली इतिहास लिखने वाले वे प्रथम व्यक्ति थे। इतिहास लेखन में वे राजाओं, युद्धों तथा महापुरुषों के जीवनवृत्तों को ही प्रधानता देने के पक्ष में न थे। उनका स्पष्ट मत था कि इतिहास में जाति की भावनाओं, इच्छाओं, आकांक्षाओं, संस्कृति एवं सभ्यता को भी महत्व दिया जाना चाहिए।

भाई परमानंद का जन्म 4 नवम्बर 1876 ई. के एक ब्राह्मण (अब पाकिस्तान में स्थित) को पंजाब के झेलम ज़िले में करियाला ग्राम परिवार में हुआ था। उनके पिताजी का नाम भाई ताराचन्द्र था। सन् 1902 में पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त करने के बाद वे लाहौर के दयानन्द एंग्लो महाविद्यालय में शिक्षक नियुक्त हुए। वे आरम्भ में ही आर्य समाज के नेता लाला लाजपत राय और महात्मा हंसराज के प्रभाव में आ गये थे। अतः डी.ए.वी. कॉलेज में अध्यापन कार्य करने के साथ ही वे आर्य समाज का प्रचार भी करते रहे। भारत की प्राचीन संस्कृति तथा वैदिक धर्म में उनकी रुचि देखकर महात्मा हंसराज ने उन्हें भारतीय संस्कृति का प्रचार करने के लिए अक्टूबर 1905 में दक्षिण अफ़्रीका भेजा, जहाँ उन्होंने अथक प्रयत्नों से आर्य समाज की शाखा स्थापित की।

दक्षिण अफ़्रीका से वे इतिहास का अध्ययन पूरा करने के लिए लंदन गए, जहाँ वे श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा तथा विनायक दामोदर सावरकर जैसे क्रान्तिधर्माओं के सम्पर्क में आये। 1908 में भारत आकर वे डी.ए.वी कॉलेज, लाहौर में फिर से अध्यापन करने लगे। पढ़ाने के साथ-साथ वे युवकों को क्रान्ति के लिए प्रेरित करने के कार्य में भी सक्रिय रहे। सरदार अजीत सिंह तथा लाला लाजपत राय से उनका निकट का सम्पर्क था। इसी दौरान लाहौर पुलिस उनके पीछे पड़ गयी। सन् 1910 में भाई जी को लाहौर में गिरफ्तार कर लिया गया। किन्तु शीघ्र ही उन्हें जमानत पर रिहा कर दिया गया।

उन्होंने बर्मा की और फिर दोबारा दक्षिण अफ़्रीका की यात्रा की। इस बीच उन्होंने उर्दू में 'तवारिखे उर्दू' नामक 'भारत के इतिहास' की पुस्तक लिखी, जिसे

सरकार ने जब्त कर लिया। यह पुस्तक 'तवारीख-ए-हिन्द' तथा उनके लेख युवकों को सशस्त्र क्रांति के लिए प्रेरित करते थे। उनके घर की तलाशी हुई और तीन वर्ष तक अच्छा चालचलन रखने के लिये उनसे जमानत देने को कहा गया। इस पर भाई परमानंद ने भारत छोड़ दिया और ब्रिटेन, गायना और ट्रिनिडाड होते हुए कैलिफ़ोर्निया, अमेरिका जा पहुँचे। वहाँ परमानंद के बचपन के मित्र लाला हरदयाल ग़दर पार्टी का काम कर रहे थे।

भारत में क्रांति करने के उद्देश्य (तथाकथित 'गदर षडयन्त्र') से वे भारत लौट आये। उनको पेशावर में क्रान्ति का नेतृत्व करने का जिम्मा दिया गया था। 25 फरवरी 1915 को लाहौर में भाई परमानन्द को गिरफ़्तार कर लिया गया। उनके विरुद्ध अमरीका तथा इंग्लैंड में अंग्रेज़ी सत्ता के विरुद्ध षडयंत्र रचने, करतार सिंह सराबा तथा अन्य युवकों को क्रांति के लिए प्रेरित करने और आपत्तिजनक साहित्य की रचना करने जैसे आरोप लगाकर 'प्रथम लाहौर षड्यंत्र केस' के अंतर्गत फाँसी की सज़ा सुनाई गयी। इसका समाचार मिलते ही सारे देश के लोग भड़क उठे। इस स्थिति में सरकार ने भाई परमानन्द की फाँसी की सज़ा को रद्द कर दिया और उन्हें आजीवन कारावास का दण्ड देकर दिसम्बर 1915 में अंडमान 'कालापानी' भेज दिया गया।

उन्हें 5 वर्षों तक अंडमान की काल कोठरी में कैद रहना पड़ा और भीषण यातनाओं को सहना पड़ा। वहाँ पर उनके और अन्य कैदियों के साथ किस तरह का कठोरातापूर्ण एवं पाशविक व्यवहार किया जाता था, किस प्रकार से उस नरक में अपार कष्टों को सहना पड़ा, इन सबका वर्णन उनकी पुस्तक 'काले पानी की कारावास कहानी आप: बीती' में देखने को मिलता है। इस पुस्तक में भाई परमानन्द द्वारा यातना के उन विकट क्षणों के वर्णन के साथ-साथ उन परिस्थितियों पर उनका गहन चिंतन भी पढ़ने को मिलता है, जिससे पाठकों को भारत के अतीत, वर्तमान एवं भविष्य के अध्ययन में सहायता और प्रेरणा मिलती है।

अंडमान की काल कोठरी में गीता के उपदेशों ने सदैव परमानन्द को कमठ रखा। जेल में 'श्रीमखवदगीता' सम्बन्धी लिखे गए अंशों के आधार पर उन्होंने बाद में 'मेरे अन्त समय का आश्रय गीता' नामक ग्रंथ की रचना की। गांधी जी को जब काला पानी में परमानन्द को अमानवीय यातनाएँ दिए जाने का समाचार मिला तो उन्होंने 19 नवम्बर, 1919 के 'यंग इंडिया' में एक लेख लिखकर यातनाओं की कठोर भर्त्सना की। 1920 में सी.एफ. एन्ड्रूज की मध्यस्थता से उन्हें

रिहा कर दिया था। काले पानी से मुक्ति के बाद वे 'नेशनल कॉलेज, लाहौर' के कुलपति बने और कुछ समय तक असहयोग आन्दोलन में भी भाग लिया। किन्तु आन्दोलन बन्द होने के बाद देश में जो साम्प्रदायिक दंगे हुए, उन्हें देखकर भाई परमानन्द के विचार बदल गए। उन्होंने कांग्रेस पर मुस्लिम परस्ती का आरोप लगाकर हिन्दुओं से 'हिन्दू महासभा' के झंडे के नीचे संगठित होने का आह्वान किया। उन्होंने राजनीतिक रूप से सक्रिय रहते हुए हिन्दू महासभा में कई दायित्वों को निभाया एवं इस बात पर बल दिया कि हिन्दुओ को अपने अस्तित्व को बचाए रखने का प्रयास करना चाहिए वरना उनका नाम केवल इतिहास की पुस्तकों में होगा।

उनके शब्दों में, "मैं चाहता हूँ कि हिन्दू जाति के लोग मुसलमानों और अन्यों के साथ अपने से बढ़कर प्रेम रखें; किन्तु साथ यह भी आवश्यक है कि वे अपने अस्तित्व को बनाये रखें। स्वयं को नष्ट करके या कमजोर बनकर हम दूसरों से क्या प्यार करेंगे और उनके लिए या देश के लिए क्या कर पाएंगे।" इस सम्बन्ध में आर्य समाज की महत्ता को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि, "मैं समझता हूँ कि हिन्दू जाति की सभ्यता और धर्म, जो कि उसकी आत्मा है, आर्यसमाज ने ही जीवित किया है और वही उसकी रक्षा कर सकता है। हिन्दुओं का पक्ष प्रस्तुत करने के लिए 1933 में वे इंग्लैंड गए और उसी वर्ष महासभा के अजमेर अधिवेशन की अध्यक्षता की। ब्रिटिश सरकार ने 3 जून 1947 को एक घोषणा की कि भारत को दो भागों में विभाजित कर दिया जाएगा तथा ब्रिटिश सरकार 15 अगस्त, 1947 को सत्ता हस्तान्तरित कर देगी। भाई जी ने अपनी पूरी सामर्थ्य से इस स्थिति को टालने का प्रयास किया। मगर यह देश का दुर्भाग्य ही रहा कि वे इस आत्मघाती स्थिति को रोक नहीं सके। भारत विभाजन से भाई जी जैसे सच्चे राष्ट्रभक्त को इतना अधिक आघात पहुंचा कि वे अत्यधिक अस्वस्थ हो गए। उन्होंने खाना पीना छोड़ दिया तथा 8 दिसम्बर, 1947 को सदा सदा के लिए अपनी आंखें बन्द कीं। इस महामना को उनके निर्वाण दिवस पर शत शत नमन...!!

लघुकथा

एक 6 वर्ष का लड़का अपनी 4 वर्ष की छोटी बहन के साथ बाजार जा रहा था। अचानक से उसे लगा कि उसकी बहन पीछे रह गयी है। वह रुका, पीछे मुड़कर देखा तो जाना कि, उसकी बहन एक खिलौने की दुकान के सामने खड़ी

कोई चीज निहार रही है।

लड़का पीछे आता है और बहन से पूछता है, "कुछ चाहिये तुम्हें?" लड़की एक गुड़िया की तरफ उंगली उठाकर दिखाती है। बच्चा उसका हाथ पकडता है, एक जिम्मेदार बड़े भाई की तरह अपनी बहन को वह गुड़िया देता है। बहन बहुत खुश हो जाती है। दुकानदार यह सब देख रहा था, बच्चे का प्रगल्भ व्यवहार देखकर आश्चर्यचकित भी हुआ....

अब वह बच्चा बहन के साथ काउन्टर पर आया और दुकानदार से पूछा, "सर, कितनी कीमत है इस गुड़िया की?" दुकानदार एक शांत और गहरा व्यक्ति था, उसने जीवन के कई उतार देखे थे, उन्होंने बड़े प्यार और अपनत्व से बच्चे से पूछा, "बताओ बेटे, आप क्या दे सकते हो??"

बच्चा अपनी जेब से वो सारी सीपें बाहर निकालकर दुकानदार को देता है जो उसने थोड़ी देर पहले बहन के साथ समुंदर किनारे से चुन-चुन कर बीनी थीं!!! दुकानदार वो सब लेकर यूँ गिनता है जैसे कोई पैसे गिन रहा हो।

सीपें गिनकर वो बच्चे की तरफ देखने लगा तो बच्चा बोला, "सर, कुछ कम हैं क्या??"

दुकानदार:–"नहीं-नहीं, ये तो इस गुड़िया की कीमत से भी ज्यादा हैं, ज्यादा मैं वापस देता हूँ।" यह कहकर उसने 4 सीपें रख लीं और बाकी की बच्चे को वापिस दे दीं। बच्चा बड़ी खुशी से वो सीपें जेब में रखकर बहन के साथ लेकर चला गया।

यह सब उस दुकान का कामगार देख रहा था, उसने आश्चर्य से मालिक से पूछा, "मालिक! इतनी मंहगी गुड़िया आपने केवल 4 सीपों के बदले में दे दी?" दुकानदार एक स्मित संतुष्टि वाला हास्य करते हुए बोला, "हमारे लिये ये केवल सीप हैं पर उस 6 साल के बच्चे के लिये अतिशय मूल्यवान हैं और अब इस उम्र में वो नहीं जानता, कि पैसे क्या होते हैं?

पर जब वह बड़ा होगा ना...और जब उसे याद आयेगा कि उसने सीपों के बदले बहन को गुड़िया खरीदकर दी थी, तब उसे मेरी याद जरूर आयेगी, और फिर वह सोचेगा कि "यह विश्व अच्छे मनुष्यों से भी भरा हुआ है।" यही बात उसके अंदर सकारात्मक दृष्टिकोण बढाने में मदद करेगी और वो भी एक अच्छा इन्सान बनने के लिये प्रेरित होगा...

वेद रूपी गंगा

इंग्लैंड प्रदेश से एक विदेशी जिज्ञासु युवक गंगा नदी की महिमा सुनकर कोलकाता आया। मगर हावड़ा पुल से गंदे गंगा जल को देखकर वह हैरान हो गया। उसके मन में शंका हुई कि क्या यही गंगा नदी है जिसके जल को अमृत समान माना जाता है? एक पंडित जी से उन्होंने अपनी शंका करी। पंडित जी उन्हें लेकर कानपुर गये और गंगा के दर्शन करवाये। वहां का जल उन्हें कुछ अच्छा लगा। पंडित जी उन्हें लेकर हरिद्वार गये। वहां का जल उन्हें पहले से अधिक अच्छा लगा। फिर पंडित जी उन्हें लेकर गंगोत्री गये। वहाँ का जल ग्रहण कर वह युवक प्रसन्न हुआ और कहा कि यह साक्षात अमृत है।

हिन्दू समाज की वर्तमान मान्यताएँ, वर्तमान स्वरूप, वर्तमान आस्थाएं सदियों के प्रवाह से कुछ विकृत, कुछ परिवर्तित हो गई हैं। जिससे इसका वर्तमान स्वरूप बदल गया है। इस परिवर्तित स्वरूप को देखकर कुछ लोग अंधविश्वासी, नास्तिक, आचारहीन, विधर्मी आदि हो रहे हैं। इसलिये संसार कि इस श्रेष्ठ विचारधारा को जानने के लिये इसके उद्गम तक जाना होगा। यह उद्गम वेद का सत्य ज्ञान है। वेद वह सत्य ज्ञान है जिसका पान करने वाला सदा के लिये अमर हो जाता है।

वेद का प्रदाता ईश्वर है इसलिये उसमें कोई दोष नहीं है। काव्य रूपी वेद को उत्पन्न करने वाले ईश्वर का एक नाम जातवेदाः इसलिये है। वेद को, परमात्मा द्वारा मनुष्यों के कल्याण के लिये दिया गया ज्ञान बताया गया है। अथर्ववेद में 16/71/1 में परमात्मा कहते हैं–हे मनुष्यों! तुम्हारे लिए मैंने वरदान देने वाली वेद माता की स्तुति कर दी है, वह मैंने तुम्हारे आगे प्रस्तुत कर दी है। वह वेद माता तुम्हें चेष्टाशील, द्वीज और पवित्र बनाने वाली है। आयु अर्थात् दीर्घजीवन, प्राण, संतान, पशु, कीर्ति, धन–संपत्ति और ब्रह्मवर्चस् अर्थात् ब्राह्मणों के तेज अर्थात् विद्या–बल रूप वरों को यह वेद–माता प्रदान करती है। वेद माता के स्वाध्याय और तदनुसार आचरण द्वारा प्राप्त होने वाले इन आयु आदि सातों पदार्थों को मुझ देकर, उन्हें मदर्पण, ब्रह्मर्पण कर के ब्रह्मलोक अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करो।

वर्ष 2016 के नए प्रकाशन

शांति मंत्र : डॉ० पूर्ण सिंह डबास **रु. 15.00**

धरती पर स्थित प्राकृतिक संसाधनों का निर्दयतापूर्वक दोहन किया जा रहा है। हमारे ऋषियों ने पर्यावरण की रक्षा के लिए शांति-मंत्र के रूप में संसार का प्राचीनतम पर्यावरण सूत्र प्रस्तुत किया था। आइए इस मंत्र की व्याख्या के द्वारा इसके ठीक अर्थ को समझने का प्रयास करें।

धर्म की परिभाषा : डॉ० पूर्ण सिंह डबास **रु. 15.00**

प्रस्तुत पुस्तिका में दी गई धर्म की परिभाषाएँ या लक्षण हमारे प्राचीन ग्रंथों पर आधारित हैं। इनका केंद्र कोई विशिष्ट व्यक्ति, पीर-फकीर, पैगम्बर, धर्म-गुरु या कोई तथाकथित देवी-देवता या महाराज नहीं है बल्कि ऋषियों और चिंतकों के सिद्धांत हैं।

Arya Samaj and the Vedic Worldview Rs. 2500.00

by Dr. Ram Prakash

This volume explores the various aspects of Vedic texts, philosophy, dharma and way of life from the highly original and revolutionary perspective of Swami Dayanand Saraswati and the Arya Samaj.It presents a vedic worldview that is in accordance with the wisdom of the ancient Indian seers and stands in sharp contrast to many of the widely popular beliefs and practices of Hinduism.

The book also carries a brief documentation of the life and legacy of Swami Dayanand Saraswati and emergence and spread of the Arya Samaj. It explores their impact on different aspects of the modern Indian society, culture and national life. Big Size Pages: 750

मनुस्मृति-भाष्यकार : पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय रु. 300.00

(भूमिका और हिन्दी अनुवाद सहित, शुद्ध-परिष्कृत संस्करण)

मानव समाज की सच्ची सुख-शान्ति और समृद्धि का मूल धर्माचरण है। मनुस्मृति के अनुसार हमारा प्रत्येक आचरण वेदानुकूल, स्मृति सम्मत, सामाजिक सदाचार अनुकूल व हमारी आत्मा के अनुकूल हो तो वह धर्माचरण कहलायेगा। अस्सी वर्षों बाद पुनः प्रकाशित इस संस्करण की विशेषता है कि लेखक ने मौलिक और प्रक्षिप्त श्लोकों की पहचान कर केवल मौलिक श्लोकों को प्रस्तुत किया है।

पुनः प्रकाशित

सत्यार्थ प्रकाश, सम्पादक : पं. भगवद्दत्त रिसर्च स्कॉलर रु. 200.00

भारत वर्ष का इतिहास : पं. भगवद्दत्त रिसर्च स्कॉलर रु. 300.00

प्राप्ति स्थानः विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

4408, नई सड़क, दिल्ली-6, दूरभाष 23977216, 65360255

Email: ajayarya16@gmail.com Web: www.vedicbooks.com